धर्म जीवन

अगस्त 2004

✡ भगवान का आश्चर्य आत्म बल

✡ मुख्य साधन

✡ स्वास्तित्व

✡ भजन

✡ धर्म का मार्ग क्या है?

✡ पिता की भूल

✡ प्रेरणात्मक प्रसंग

2

भगवान का आश्चर्य आत्म बल

श्री देव गुरु भगवान के भीतर आश्चर्य आत्म बल वर्तमान है। जब किसी काम के करने के लिए एक बार इरादा कर लेते हैं, तब ऐसा मालूम होता है कि उसमें समय और फासला उनके लिए किसी तरह भी रोक नहीं बन सकते। इस तरह सेहत के बिगड़ जाने का ख्याल भी उसमें कुछ विध्न पैदा नहीं कर सकता। एक बार एक उपदेश के सिलसिले में भगवान ने कृपा करके अपने शुरु के जमाने के पुरजोश लैक्चरों के सम्बंध में कुछ इरशाद फरमाया जिस में उन्होंने यह भी बताया कि कई बार ऐसा हुआ है किसी दूरदराज के स्थान पर उनके लैक्चरों का प्रबंध किया गया है और उनका समय ऐसा रखा गया है कि जिस पर रेल का लम्बा सफर करने के बाद वह मुश्किल से वहां पहुंच सकते थे और फिर वहां पर लैक्चर देने के बाद उन्हें और स्थानों पर उपदेश देने के लिए सफर करना पड़ता है तो भी इस सारे बोझ को उन्होंने खुशी खुशी अपने सिर पर लिया है और इसे निहायत कामयाबी से निभाया है। एक बार केवल यही नहीं कि उन्हें एक स्थान पर लैक्चर देने के लिए बहुत लम्बा सफर तय करना पड़ा, बल्कि मामूली सड़क के रास्ते गड्डों आदि पर जाना पड़ा और इतना लम्बा सफर तय करने और ऐसे तकलीफदेह हालात में सफर करने के बाद उनका वहां पर लैक्चर हुआ और लैक्चर के बाद उन्हें वापिस फिर आना पड़ा।

भगवान ने एक बार फरमाया है :-

"मैं नेचर के विकास के नियम को पूरा करता हूं। मैं मनुष्य जीवन के सर्वोच्च विकास में पूरी तनदही से सहायता करता हूं। नेचर का यह सबसे उच्च लक्ष्य है, और इसी लक्ष्य को पूरा करने के लिए नेचर ने मुझे आविर्भूत किया है। तब फिर मैं पराजित कैसे हो सकता हूं? कदापि नहीं। कदापि पहीं।"

भगवान का यह भाव अक्षरश: ठीक है। भगवान ने अपना यह अटल विश्वास अपने कई तुच्छ सेवकों के भीतर भी संचार कर दिया है। एक बार जब मैं समाज की कई संस्थाओं आदि के लिए दान एकत्र करने के लिए जाने लगा तब भगवान ने कृपा करके इस विषय में मुझ से कुछ बात चीत की थी। इसमें उन्होंने फरमाया था कि उनके लक्ष्य की जय पर जितना मेरा विश्वास होगा, उतना ही मुझे सफलता प्राप्त होगी। फिर उन्होंने अपने जीवन की कई घटनाएं बताई और इस सिलसिले में फरमाया कि जब श्रीमान देवत्व सिंह जी अपने शुरू के जमाने में एक ऐसे इलाके में प्रचार करने के लिए दौरे पर गए कि जहां पर सिर ढकने के लिए भी कोई जगह न थी, तब हमने उन्हें कहा था कि पहले तुम अपने रहने के लिए एक मामूली सी झोंपड़ी बना लो और फिर आहिस्ता आहिस्ता मन्दिर भी बन जाएंगे। इसलिए उन्होंने ऐसा ही किया और इसके बाद उस इलाके में देव समाज के साधन आश्रम भी बन गए। फिर भगवान ने फरमाया "एक बार हमारे सेवकों ने इसी प्राप्त जमीन का एक टुकड़ा साधन आश्रम बनाने के लिए मोल लिया, परन्तु विरोधियों ने उस जमीन पर हक़शुफा करके वह जमीन उनसे छीन ली। तब हमने अपने सेवकों को कहा कि उन्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। जमीन और मिल जाएगी। इसलिए उसके बाद जल्दी ही वहां पर जमीन का टुकड़ा उन्हें मुफ्त में मिल गया और वहां पर वह साधन आश्रम बनाने में सफल हो गए।"

धर्म जीवन

खण्ड 20 अंक 9
अगस्त 2004
वार्षिक मूल्य 50 रूपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

मुख्य साधन

परम पू० भगवान देवात्मा का आर्विभाव विकास क्रम का अनोखा शाहकार है। मनुष्य जीवन की सफलता का राज़ इसमें निहित है। जैसे मुनष्य शरीर का हवा पानी खुराक पर निर्भर होना अटूट है उसी प्रकार मनुष्य आत्मा की रक्षा और विकास की निर्भरता देवात्मा पर अटूट है।

मनुष्यात्मा के लिए देवात्मा की शरण प्राप्त होना उसका महा सौभाग्य है। उनकी शिक्षा प्राप्त करना, उनका शिष्य बनना, उनके मिशन में कुछ सेवाकारी होना, प्रचारक बनना, मनुष्य का महा उच्च अधिकार है।

उपरोक्त अधिकार प्राप्त करके भी इंसान का काफी भला होता है, परन्तु इसमें मनुष्य जन्म की पूर्ण सफलता नहीं। केवल कुछ पापों वा मिथ्या विश्वासों को छोड़ देने से नहीं बल्कि उसकी यह सफलता विशेष योग्यता से सम्बन्धित है। यह योग्यता देवात्मा के अद्वितीय देव जीवन के प्रभावों को प्राप्त कर सकने और उसको बढ़ाने में निहित है। देवात्मा रूहानी जगत के सूरज उदय हुए हैं, उस सूरज की रोशनी तक रसाई पा सकने की गाढ़ इच्छा और योग्यता बहुत ही परम आवश्यक वस्तु है। देवात्मा के परम कल्याणकारी देव प्रभावों तक रसाई प्राप्त करने के लिए जो साधन अत्यंत अवश्यक है, वही साधन परम अवश्यक साधन है। हम सबके लिए यही मुख्य साधन है।

प्रश्न पैदा होता है, हम जो साधन करते हैं, गुरु महाराज की परम पवित्र छवि को लेकर उसको साफ करके, फूलों से सजाकर महिमा के गीता गाकर, पू० देव स्तोत्र गाकर, सत्गुरु को बार बार प्रणाम करके उनसे देव प्रभावों के लिए भिक्षा मांगकर, फिर उनके पू० ग्रन्थों का पाठ करके, जो साधन करते हैं, क्या वह साधन मुख्य साधन नहीं? यह साधन तो बहुत जरूरी है परन्तु अकसर यह सब साधन एक अभ्यास बन जाते हैं और कभी कभी हमें मामूली प्रभाव भी मिल जाते हैं, परन्तु साधन को पूर्ण सार्थक बनाने के लिए और हमें प्रतिदिन देवात्मा की अलौकिक ज्योति प्राप्त करने के लिए, एक और साधन करना भी आवश्यक है, वह साधन है कि जिसके द्वारा हमारी देवात्मा के देव प्रभावों तक ठोस रसाई हो सके, वह साधन ही

मुख्य साधन है।

महान साधक श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी महाराज का ही भजन है, जिसमें उन्होंने मुख्य साधन की बात की है और कहीं मुख्य साधन का ज़िकर कम ही मिलता है। वहां फरमाया गया है :-

"जीवन के सारे लाभों से, धर्म का लाभ बढ़कर है,
तुम्हारी ज्योति दिखलावे, तुम्हारी ज्योति मिल जावे।
तुम्हारी ऐसी ज्योति की, मुझे अतिशय जरूरत है,
तुम्हारी ज्योति दिखलावे, तुम्हारी ज्योति मिल जावे।
तुम्हारी ज्योति पाने का, कौन सा मुख्य साधन है,
तुम्हारी ज्योति दिखलावे, तुम्हारी ज्योति मिल जावे।"

इस प्रकार परम पू० भगवान देवात्मा के देव प्रभावों तक स्थाई पहुंच प्राप्त करने के लिए, लगभग सब मनुष्यात्माओं को इस मुख्य साधन (केवल एक दम अनुरागी बनने की योग्यता रखने वाली श्रद्धेय जी जैसी महान आत्माओं को छोड़कर) के बहुत संजीदगी के साथ जानने और इसको अपनी सारी योग्यता के साथ जीवन भर पूरा करते रहने की बहुत बहुत अवश्यकता है।

श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी इस विषय में अपना अनुभव लिखते हैं :-

"यह बात बहुत स्पष्ट रूप से सामने आ सकती है कि मैं पू० भगवान की शरण में आने से पहले आत्म अंधकार में इस प्रकार लिप्त और नीच गति दायक शक्तियों के महा विनाशकारी अधिकार में इस प्रकार ग्रस्त था कि पू० भगवान की शरण ग्रहण करके और लगातार उनकी शरण में रहकर भी मुझे उनकी आत्म प्रशसंक देव ज्योति के प्राप्त करने, उस ज्योति में अपने आत्मा की असल अवस्था को देखने और अपने अंदर की नीच गति दायक शक्तियों का प्रकृत बोध प्राप्त करने के लिए सालों लग गए।..... मैं सालों साल क्या दूसरे सम्बन्धियों के सम्बंध में और क्या इससे भी बढ़कर स्वयं पू० भगवान के सम्बंध में भिन्न प्रकार की अति घृणित और विनाशकारी नीच गतियां करता रहा और उन गतियों को करके सालों तक मुझे साधारण यह भी पता नहीं लगा कि मैं कोई नीच गति करता हूं।" (कोई 12-15 साल लग गए) इस बात से अनुमान कर सकते हैं कि यदि श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी महाराज को गुरु महाराज की ज्योति तक स्थाई रसाई करने में इतना लम्बा समय लग सकता है, तो हम साधारण आत्माओं का क्या हाल हो सकता है?

श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी ने अपने आख़िरी सांस तक इस साधन को अपनाए रखा, प्रायः पूरे 100 वर्ष हो चुके हैं जब साधन के विषय में उन्हें गुरु महाराज ने फरमाया था। वह मुबारक दिन मई सन 2004 था।

जिस प्रकार चीन और रूस की बर्फीली सर्द हवाओं को हिमालय पर्वत भारत में आने से रोके रखता है, उसी प्रकार लगभग हम सब मनुष्यों का अहं अनुराग, विशेषकर घमंड और नीच घृणा देवात्मा के देव प्रभावों को हम तक आने से स्तम्भ बनकर रोके रखते हैं। देवात्मा की देव शक्ति की प्राप्ति के सम्बंध में इससे बढ़कर और भयानक और कोई रोक नहीं, जितना कोई मनुष्य अहं अनुरागी होता है उतना ही वह अपने आपको उससे मुक्त देखता है। देव ज्योति के बिना, जो कुछ मनुष्य वास्तव में है, उसकी वास्तविकता को नहीं देख सकता और जो कुछ मनुष्य है नहीं, वह कुछ वह अपने आपको समझता वा विश्वास करता है।

सारे मनुष्य बचपन से ही सुख अनुरागी बनना आरम्भ हो जाते हैं, फिर सारी उम्र अहं अनुराग बढ़ता जाता है।

मनुष्य सुख अनुरागी है। सुख अनुरागी होना वा पाप परायण होना, झूठ परायण होना एक ही बात है। मनुष्य होकर नीच होना, झूठा होना, दुर्बल, अपराधी वा पापी होना अवश्यक है। अपने आपको झूठ मूठ अच्छा, ठीक बढ़िया महान वा निर्दोष देखना वा दिखाने में मनुष्य को सुख मिलता है, तृप्ति मिलती है। यह सोच सारी उम्र बनी रहकर मनुष्य को अहं अनुरागी बना देती है। अपने आपको खराब सोचने में मनुष्य को दुख लगता है और ना-गवार गुजरता है, इसलिए वह अपना खराब रूप देखने में असमर्थ्य होता जाता है।

अहं अनुराग के पहाड़ को अपने और देव ज्योति के बीच में से हटाना और घटाना ही मुख्य साधन है। जो यह कर सकता है वह देव ज्योति तक अपनी योग्यता के अनुसार स्थाई रसाई पा सकता है।

अपने झूठे, नीच, बुरे, अपराधी, निर्दयी, दोषी, स्वार्थी वा लालची, कपटी रूप को बार बार देखना (हो सके तो साधन में) और उसके ऊपर लगातार लिखना ही अपने सम्बंध में बढ़े हुए मिथ्या विश्वासों को या अहं अनुराग को घटा सकता है और योग्यता अनुसार हटा सकता है। जो यह साधन (जो श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी ने अपनाया था) निश्चय पूर्वक 6 महीने भी दिली भावों से कर सकता है, उसको उसके मुख्य साधन होने की यर्थाथता की समझ आने लग जाती है। देवात्मा की ज्योति का भरसक दान, अपने आपको वास्तव में जानने का दान, देवरुप के दर्शनों का दान, अपने अदृष्य अहं अनुराग को घटाने का सौभाग्य इस मुख्य साधन को अपनाए बिना नहीं किया जा सकता।

यह मुख्य साधन कैसे करना है और कैसे लिखना है, इसके सम्बंध में श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी ने अपने भाई श्रीमान हितैषी सिंह जी को भी एक पत्र लिखा था। वह पत्र समाज के साहित्य में कई बार छपा है।

हम सब मनुष्य ही नीच अनुरागी हैं और नीच घृणाकारी हैं, इन भावों से परिचालित होकर सदा गतियां करते रहते हैं। जब से ही होश सम्भाला है, उसी समय से ही अपनी नीच गतियों वा नीचता का घृणित वा घिनौना और हानिकारक रूप सामने लाकर प्रति दिन घंटा भर के करीब लिखा जावे।

हम स्वाद अनुरागी हैं। अपने स्वाद अनुराग से बचपन से लेकर किस प्रकार जरूरत से अधिक खाया फिर चूर्ण वा हाजमौला की गोलियां खानी पड़ती हैं, बिमारियां लगा ली, दूसरों को कुछ खाते हुए देखकर कैसे दिल ललचाया, कैसी कामनाएं उठीं, उसकी तृप्ति के लिए कैसे मित्रताएं बढ़ाई। किस प्रकार चोरी करके खाया, किस प्रकार उल्टियां वा दस्त लगे, टाईफाईड हुए, कैसे मोटापा आया, शूगर हुई, आंखे खराब हुई, दिल के रोग लगे, डाक्टरों की फीसें भरी, शुभ कामों में रूकावट आई, और दुख, हानियां उठाई घाटे के शिकार हुए। वह सारी कथा बार बार याद करके अपनी असल औकात को लिखना।

हम काम अनुराग के दास हैं, इस वासना ने बचपन से लेकर अब तक क्या क्या अदना और घृणित नाच नचाए हैं। हमारा मन नीच लालसाओं से भरा हुआ है। हम किस प्रकार किसी को देखकर ललचाएं हैं किस प्रकार अशिष्ट, अभद्र, अशलील और मलीन विचारों से या क्रियाओं की गंदगी से

लथपथ हुए हैं। हमारी क्या गुप्त सोचें या करतूतें रही हैं। क्या क्या विकार, कलंक या बदनामी वा भ्रष्टता को प्राप्त हुए हैं। तोहमतें झेली हैं। किस प्रकार उस आकर्षण ने नाच नचाए। हमारी आंखों, में ख्यालों में किस प्रकार मैल आती है। क्या क्या अशिष्ट इशारे, या बोल या हावभाव अपनाए। किस प्रकार सेहत की, समय की हानि की, पैसे, पढ़ाई और कामकाज की हानि हुई। इस वासना ने कब और कहां वहशी बनाया, अश्लीलता का नग्न नाच नचवाया। पर सुख, पर इज्ज़त की, पर शान्ति की हानि की। किस किस को दुख पहंचाया। ऐसी प्रत्येक नीच गतियां, जो जो जिस जिस के जीवन में घटी हों, उन सब को स्मरण करके लिखना, यह मुख्य साधन का भाग है।

धन अनुराग ने हमारे से क्या क्या लीला करवाई, कहां कहां ख्याल ख्याल में बेईमान बनवाया, बेईमानी की, चालाकी की, धोखे किए, अन्याय किए, हक अपहरण करने की क्या क्या गतियां की। लालच में आकर झूठ मारने, प्रलोभन देने की, हेरा फेरी की, मिलावट की, चीज़ को कम तोलने की, जो गतियां हुई हैं, कपटता और फरेब की गतियां, इसको लेकर सम्बंधों में टकराहट और कड़वाहट और दूरी पैदा हुई, दूसरों के साथ लड़ने का अपमान करने की, सीधे साधे जनों को ठगने और लूटने की, चकमा देने की, थोड़ी कीमत की चीज़ का अधिक मोल पाने की, थोड़े समय के काम के अधिक पैसे वसूलने की और इस प्रकार की और गतियां याद करके उन पर शर्मसार होकर लिखने का साधन।

हमने दूसरों को लताड़ा है, उनको अपमान वा अनादर किया है, उनको कोसा है, नज़ायज़ ढंग से रोका टोका है, दोष निकाले हैं, दुख दिया है, हाथ उठाया है, बच्चों को मारा है, पत्नी को झिड़का है वा लताड़ा है, बुरा भला कहा है, लड़ाई की है, गर्जना कर करके उसको अपमानित किया है। उस पर ज़्यादतियां की है, अनर्थ और ज़ुल्म किए हैं, सताया है, तड़पाया है, और ऐसे अपहरणकारी वा अन्यायकारी कर्म किए हैं, उनको याद करके बार बार लिखना।

इसी प्रकार और नीच अनुरागों से प्रेरित होकर की हुई नीच गतियों को, विशेषकर ईर्ष्या, द्वेष, नीचघृणा की गतियों को बार बार याद करके लिखना, झूठी तोहमतें और इलज़ाम लगाए हैं, उनको याद करके लिखना।

इस साधन को लिखित रूप में प्रतिदिन करना और अपने नीच और घृणित रूप को अनुभव करने, उस पर शर्मसार होने पर फटकार महसूस करना ही मुख्य साधन है। यह साधन जो 5-6 महीने लगातार कर सकेगा, फिर उसको उसकी कीमत का पता भी चल जाएगा। फिर उसको साधनों में देवात्मा की ज्योति भी मिल जाएगी। और फिर मनुष्य अपनी पहुंच अनुसार इस साधन को कभी नहीं छोड़ेगा।

काश! अधिकारी जन अधिक से अधिक इस साधन को ग्रहण कर सकें। इस मुख्य साधन में हमारा सब का, समाज का और हमारे परिवारों का हित छुपा हुआ है।

(बलदेव सिंह)

स्वास्तित्व

स्वास्तित्व का अर्थ है अपना आप। अस्तित्व क्या है? जो कुछ हम हैं और हमारी हस्ती है। अब प्रश्न यह है कि हम हैं क्या? बाहर से देखने से हम अपने शरीर को अनुभव करते हैं और यह भी अनुभव करते हैं कि हम केवल शरीर नहीं, हम अपने भीतर कई प्रकार के भाव रखते हैं, ज्ञान रखते हैं और उस ज्ञान और भावों का हम प्रकाश भी करते हैं। इसीलिए हम केवल शरीर नहीं, हमारे भीतर जीवनी शक्ति है, जो शरीर के द्वारा हमारे से विभिन्न प्रकार की क्रियाएं करवाती है। शरीर और जीवनी शक्ति (आत्मा) को लेकर ही हमारा अस्तित्व है। प्रत्येक मनुष्य अपने अस्तित्व की रक्षा करना चाहता है। केवल मनुष्य ही नहीं पशु पक्षी और अन्य जीव भी अपनी रक्षा चाहते हैं। स्वास्तित्व यज्ञ का भी यही लक्ष्य है कि हम अपने अस्तित्व की रक्षा वा विकास कर सकें। परन्तु यह प्रबल इच्छा रखकर भी क्या कोई अपनी रक्षा और विकास कर सकता है। नहीं, उसका अपना अलग नियम है। शरीर की रक्षा करना चाहकर भी यदि हमें खुराक न मिले, पीने को पानी न मिले तो हमारा शरीर नहीं बच सकता। शरीर और आत्मा में से पहले हम शरीर को ही लें, हम स्थूल शरीर रखते हैं, परन्तु क्या हम सदा उसको जीवित रख सकते हैं। नहीं रख सकते। परन्तु शरीर को निरोग वा दीर्घायु रखने के अपने नियम हैं। मनुष्य के विकास और विनाश के नियमों को जान लिया है, परन्तु उसकी कल्पना यहां तक ही पहुंची है, कि शरीर पर नियम काम करते हैं, और विनाश और विकास के नियम काम करते हैं। परन्तु क्या यह नियम हम अपने आत्मा के सम्बंध में भी देख सकते हैं।

एक आत्मा जो दिन पर दिन नीच से नीच होता जाता है। वह विनाश को प्राप्त हो रहा है। जैसे पहले वह नशा नहीं करता था, मांसाहार नहीं करता था, अब वह करने लग गया है, तो उसकी यह क्रियाएं उसे नीच बनाती हैं, कोई मनुष्य ईमानदार था, पवित्र था, परन्तु अब नहीं रहा तो यह उसके कदम विनाश की ओर बढ़ रहे हैं और यह क्रियाएं उसकी आत्मा में भाव शक्तियां करवाती हैं, शरीर तो केवल औज़ार है।

यदि कोई जन किसी भली संगत से नशे छोड़ता है, मांसाहार छोड़ता है। रिश्वत लेना वा बेईमानी छोड़ता है पवित्र और वफादार बनता है, तो वह विकास की ओर बढ़ रहा है। शारीरिक और आत्मिक विकास से ही हमारे अस्तित्व की रक्षा है।

जैसे शारीरिक रोग धीरे धीरे शरीर को दुर्बल बना देते हैं, उसे दुखों में फंसा देते हैं, उसी प्रकार जितने भी नीच भावों से नीच क्रियाएं हम करते हैं वह हमारे आत्मा के रोग हैं। यह आत्मा के रोग यदि बढ़ते जाते हैं, तो आत्मा भी दुर्बल होता और नष्ट हो जाता है। यह शिक्षा कि शरीर मरता है और आत्मा अमर है, अंध विश्वास पर आधारित और हानिकारक है। आत्मा की मृत्यु के साथ हमारा अस्तित्व भी नष्ट हो जाता है।

शरीर का ज्ञान भी बहुत अवश्यक है, परन्तु

आत्मा का ज्ञान उससे भी अधिक अवश्यक है, परन्तु यह ज्ञान बहुत सूक्ष्म है और कठिन है। यह जानना कि आत्मा क्या है? उसकी उच्च वा नीच गतियां क्या हैं? उसका विनाश और विकास क्या है, यह बहुत लम्बे समय का काम है। आत्मा के विकास के लिए किन किन सात्विक भावों की आवश्यकता है। यह उससे भी आगे का कदम है।

आत्मा का सच्चा, ठोस और विज्ञान मूलक ज्ञान पाने के लिए देवात्मा का दर खुला है। उन्होंने आत्मा के विषय में वह सत्य और तत्व खोजें हैं, जो हमें विश्व में कहीं नहीं मिलते। जीवन तत्व क्या है? इसका ज्ञान देवात्मा ने पू० देवशास्त्र तीसरे खण्ड की रचना करके एक विज्ञान, मूलक शिक्षा का भण्डार खोल दिया है, जो एक शीशे की तरह मनुष्य को उसकी नीच गतियों को स्पष्ट करता है और उनसे कैसे बचा जा सकता है। यह मार्ग दिखाता है उच्च भावों को कैसे विकसित किया जा सकता है, इसका ज्ञान देता है।

अपने अस्तित्व की रक्षा और विकास के चाहवान प्रत्येक व्यक्ति के लिए इस ग्रंथ का अध्ययन करना अति अवश्यक है। देवात्मा के देव प्रभावों को पाकर और ऐसे ग्रंथों का अध्ययन करके ही हम इन दिनों को सफल कर सकते हैं। जिन जनों ने ऐसे साधन किए हैं, समय समय पर उन्होंने अपने आत्मा का विकास किया है।

इस अंक में कुछ ऐसे पत्र दे रहें हैं। जिनसे देवात्मा के देवप्रभावों ने किस कदर एक एक जन को अपने अस्तित्व के सम्बंध में कुछ बोध दिया और उसे विनाश पथ से किसी सीमा तक हटाकर विकास की ओर मोड़ा।

मेरा असल रूप दिखवा दिया

हे दाता, आपका मैं किन शब्दों में धन्यवाद करूं, आपने ऐसे धर्म सम्बन्धियों की मण्डली बनाई है, कि जो विश्व में अपना एक विशेष स्थान रखती है, जिनके संग्राम से आपका दर मिला, आपकी स्थापित धर्म संगत मिली, अनुपम साधन विधि मिली, अनुपम त्यौहार और सबसे बहुमूल्य देव ज्योति मिली, जिसमें अपने रूप के कुछ दर्शन हुए। हे दाता! आपने मेरे जैसे अबोधी, नीच जीवनधारी वा कृपा-पात्र जीव तक अपनी ज्योति पहुंचाकर मेरे हित के द्वार खोल दिए। आत्मा के विचार से मुझ अंधे को आंखे प्रदान की और जो महान बरकतें मिली, उसका शब्दों में ब्यान करने में असमर्थ्य हूं। सच है, "वह जुबां कहां से लाऊँ, तुम्हारी महिमा के जो गीत गाए।" आपकी ज्योति में अपना अपराधी रूप नज़र आता है। काश! आपका तेज प्राप्त हो सके और अपनी नीचता के लिए उच्च घृणा पैदा हो सके।

हे भगवान! जब नीच भावों का हमला होता है, तो आत्मा में अंधेरा छा जाता है, जिस प्रकार बहुत बड़ा तुफान आ गया हो। नीच भावों की आंधीयां चलती हैं। उसकी महा हानियों से बचने के लिए मैं अपने आपको लाचार पाता हूं। इस भयानक आंधी में भी अपनी पत्नी को चट्टान की तरह स्थिर देखता हूं। वह मुझे अपने से महान नज़र आती है। अपने में बहुत सी कमज़ोरियां वा दुर्बलताएं नज़र आती हैं। ऐसी हालत में अपनी धर्म पत्नी के लिए भी हानिकारक बन जाता हूं। तुफान रुकने पर पछताता हूं, अपने आपको धिक्कारता हूं, शर्मसारी अनुभव करता हूं। आपकी रोशनी लाईट हाऊस की तरह लाईट देती रहे और

मैं अपनी कमज़ोरियों से बच सकूं। अपनी पत्नी का अपने से महान रूप देख कर उन पर अत्याचार से बच सकूं। वह अपमान वा अत्याचार सहकर भी, कठोर वचन सुनकर भी, यहां तक कि मार खाकर भी मेरे हित का सोचती हैं, मेरी कमियों की ओर ध्यान न देकर मेरे हित के सुझाव देती हैं, यह बात उनके आगे झुका देती है। हे भगवान! यह सब आपकी ही कृपा है, वरना मुझे तो उन में कमीयां ही कमीयां नज़र आती थी। उनकी हितकर बातें भी अपमान जनक लगती थी। उनके हितकर सुझाव भी तीर की तरह चुभते थे। बदले की भावना से भरकर उनको कठोर वचन बोलता, अपमान करता, उनकी आत्मा छलनी छलनी हो जाती थी। वह दुखी दिल के साथ कहा करती थी कि कम से कम यह तो देख लो कि मैं यह बात क्यों कह रही हूं। मुझसे तुम्हारी हानि देखी नहीं जाती। आपकी किसी गल्ती के कारण आपका कोई अपमान कर जावे, यह मुझसे देखा नहीं जाता। आपने समाज में जाकर भी कुछ नहीं सीखा। समाज का नाम डुबो दिया। बच्चे मेरा अपमान करते हैं, तो आप खुश होते हैं, कितने कठोर हो। बिमार हो जाती हूं औरों के घर फैंक आते हो। स्वार्थी हो, तुम धर्म नहीं पा सकते। लोग तुम्हें भक्त जी कहते हैं पर मेरे लिए पत्थर समान हो। मुझे आशा थी कि आपके परिवार से स्नेह वा प्यार मिलेगा और मुझे बचपन के सब दुख भूल जाएंगे, पर क्या पता था कि उससे भी बढ़कर नर्क की आग में झोंक दोगे। मेरे पिता ने कभी फूल की छड़ी भी नहीं लगाई थी। यहां आकर अपमान ही अपमान और मार तक खानी पड़ी है। जब तुम ही मेरे लिए इतने कठोर हो तो मैं किसके पास अपील करूं। कभी नहीं सोचा कि मेरे पास कोई कपड़ा है, कभी बच्चों के खाने के लिए कुछ नहीं लाए।

उनकी यह बातें बिल्कुल सच्ची होती थी पहले तो घर कुछ लाता ही नहीं था यदि लाता तो इतना थोड़ा कि बच्चे लड़ने लगते। दिल करता है कि अपने आपको सख़्त से सख़्त सजा दूं, मैं इतना स्वार्थी हूं कि मनुष्य कहलाने के भी योग्य नहीं। मेरी पत्नी और बच्चे मुझे कैसे क्षमा करेंगे। मैं न तो पति सही बना और न पिता। मैं अपने बच्चों के अच्छे गुणों की कदर तो क्या करनी थी, उल्टा उन्हें अपमानित करता। मेरे होते हुए भी मेरे बच्चे अनाथों की तरह पले हैं। उनकी कमाई में से भी उनको कुछ देना नहीं चाहता। मैंने अपने जीवन का कोई अच्छा उदाहरण उनके लिए नहीं बनाया। मैं बाप नहीं जल्लाद हूं। इससे बढ़कर शर्मनाक बात क्या होगी कि एक दिन मैंने अपने एक पुत्र को इतना ज़लील किया कि वह रोने लगा। हाए! मैं इतना दुष्ट हूं कि अपने एक बेटे की मौत पर नंगा ही उसको कफन में लपेट दिया, उसके डालने के लिए नया कपड़ा नहीं लाकर दिया। वह आखरी समय तक सेवाकारी होता हुआ शहीद हो गया। परिवार की पालना में वह रुखा सूखा खा कर कठिन संग्राम करता हुआ खाली हाथ इस संसार से चला गया।

हे सतगुरु! आपकी ज्योति में यह नज़र आ रहा है कि मैं बच्चों की थोड़ी सी गल्ती पर जरूरत से अधिक मारता था, उन्हें सजा देता था, उनकी जायज़ आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं करता था। हे दाता! आपकी अनुपम ज्योति मिलती रह सके। मुझे अपना चण्डाल रूप, पापी और कपटी रूप दिखाई देता रहकर अपने ऊपर लानत देता रहूं। परिशोध की आग में से तपकर कुछ पापों का

परिशोध कर सकूं।

हे भगवान! आपकी ज्योति को जितना पाया है, मेरा सम्बंध अपनी धर्म पत्नी के साथ हितकर हो गया है। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था कि उनके साथ मेरा सम्बंध बेहतर हो सकेगा। उनके उपकार और सेवाएं दिखाई दें सकेंगे। मैं आत्म सम्मान के चक्कर में अपना अहंकार बढ़ाकर अपनी यहां हानि कर रहा था। आपकी कृपा से उपकारियों और सेवाकारियों का रूप नज़र आयाहै। बच्चों के सम्बंध में भी काफी बेहतरी आई है। आपकी ज्योति सदा मिलती रहे और धर्म सम्बन्धियों का सहयोग मिलता रहे और मेरी भलाई का द्वार खुल सके।

अपने जीवन पर एक नज़र

समाज का मैंबर बन गया-शराब, मांस आदि से बच गया। परन्तु सेवक बनकर भी मेरा ध्यान कभी अपनी तरफ नहीं गया। 1988 के महोत्सव के बाद श्रीमान बलदेव सिंह जी ने मुझ जैसे घटिया आदमी को समाज के काम के लिए रख लिया। मेरे भले का कुछ मार्ग खुलना था। मैं सत्संगों में शामिल होने लगा तो मेरा ध्यान अपनी तरफ गया कि मैं क्या बना फिरता हूं ...

पिता परलोक चले गए, मेरी तरफ से सबसे बढ़कर दुखी गए। मैं किसी काम काज में नहीं दिल लगाता था। मेरी पढ़ाई के लिए मेरी सुख सुविधा के लिए बचपन से वह संग्राम करते रहे परन्तु मैने उनका वांछित सम्मान तो क्या करना था, अपमान कारी वा दुख देने वाला ही था। अपनी विधवा मां को बहुत सताया। वह मेरे लिए इतनी सेवाकारी होती थी कि "पुत्र को मैं खुद खाना खिलाऊं" मैं आग बबूला हो जाता कि रोटी पहले क्यों नहीं बनाकर रखी। यदि बनाकर रख देती तो कहता कि पहले क्यों बनाकर रखी। अर्थात किसी ओर नहीं छोड़ता था। मैं उन्हें बहुत सताता। मेरी माता मेरे लिए इतना करती है और करती रहीं हैं, मैं नामुराद अब भी उन्हें तड़पा जाता हूं। पहले तो कुछ ब्रेकें लगी, परन्तु आन्तरिक प्रकृति तो वही थी। ज़रा सी अपने सुख पर चोट लगी, तो उल्ट पुलट हो जाता, जो नहीं कहना था, वह कह जाता हूं, फिर तड़पता हूं, पत्र लिखता हूं, क्षमा मांगता हूं, यदि सत्गुरु की जीवन दायक ज्योति न मिले, तो मेरा राक्षसी और घृणित रूप हो जाता है।

बाकी बहन भाईयों के साथ भी स्वार्थमूलक सम्बंध रहा, प्रत्येक से लाभ उठाए, और दुर्वव्यवहार किए। परन्तु फिर भी उन्होंने मेरे लिए इतना किया, परन्तु मैं नाशुकरे ने सबके दिल ही दुखाए हैं।

परन्तु मैं गल्त हूं, मैं यह कभी भी नहीं मान सकता था, यदि गुरु महाराज की ज्योति शक्ति न मिली होती, जितनी देर संगत में रहता हूं/अपनी तरफ ध्यान जाता है। माता के लिए, बहन भाईयों के लिए कुछ न कुछ करने या कम से कम उन्हें परेशान न करने के भाव पैदा होते हैं। यदि सम्बंध ही बेहतर हो जाएं तो मेरा गुरु मे साथ जुड़ना सफल हो जाए। हानि परिशोध करने का भाव पैदा होता हैं इससे पहले अपना आप अच्छा ही अच्छा लगता था।

कई लोगों वा संस्थाओं की पुस्तकें लेकर वापिस नहीं की थी, वह वापिस की। इनके विषय में कोई कुछ नहीं जानता था। गुरु महाराज की रोशनी मिलने से मुझे अपना आप खराब, चोर,

दम्भी, पखंडी नज़र आया। अपने स्कूल की पुस्तकों के पैसें प्रिसीपल को देने की पेशकश की। उन्होंने मना किया कि इतना पुराना हिसाब कहां adjust करेंगें मैंने साल का हितस्रोत और धर्म जीवन का स्कूल के नाम चंदा भर दिया।

म्यूनिसपल कमेटी की कुछ देर की नौकरी में वहां से किताबें उठा लाया, वह वापिस की। B.Ed करते हुए मोगा ट्रेनिंग कालिज की कई पुस्तकें अपने पास रख ली थी, वापिस करने के लिए गया, तो लाईब्रेरियन साहिब कहने लगे कि यह काम तुमने अच्छा नहीं किया तो मैंने कहा कि अच्छा तो मैंने 2-3 साल पहले नहीं किया था। अब तो वापिस करके अपनी आत्मा की मैल धो रहा रहूं। मैंने देव समाज की पुस्तकें और कागज वापिस किए। पंजाब यूनिवर्सिटी की एक किताब वापिस की। एक जन की पुस्तक गुम हो गई थी उसके स्थान पर उसे नई पुस्तक ला कर दी और उनसे क्षमा मांगी। बी. एड में ही लुधियाने से पंजाब साहित्य ऐकेडमी की एक किताब उठा लाया। उसके बदले और किताबें लाकर दी।

कई साल पहले बस में जा रहा था, कुछ पैसे गिरे हुए मिल गए, वह वापिस कर सकता था, परन्तु शैतान मन नहीं माना, पैसे परिशोध फंड में दिए। युनिवर्सिटी में स्वर्गिय डाक्टर रवि जी ने नोट साईकलो सटाईल करवाने के लिए 5-5 रूपये विद्यार्थियों से इकट्ठे करने के लिए कहा। कुछ तो खर्च हो गए, बाकी 1100 रूपये के करीब हज़म कर गया। अपने एक उपकारी अध्यापिका के पास से पैसे ले आया, यदि गुरु महाराज की ज्योति न मिलती तो कभी वापिस न करता। जब वापस करके आया तो उनके सामने समाज की महिमा महान हुई।

मेरा चोर, डाकू का ऐसा घृणित रूप था, ऐसी ऐसी नीच गतियां की हैं, जिनका पता कुछ न कुछ गुरु की रोशनी में लगता है। एक बार बस में सवार था, बहुत भीड़ थी, कंडक्टर को कहा फिर पैसे देता हूं, पर नहीं दिए, परन्तु किसी और को टिकट के पैसे देकर दानी करण बन गया। फिर कंडक्टर को वह पैसे वापिस करके आया।

स्कूल की mess का इंचार्ज बन गया, पूर्ण सम्भव था कि मैं अमानत में ख़्यानत करके सेवकी की प्रतिज्ञाएं भंग कर सकता। श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी की आत्मकथा पढ़ने काअवसर मिल गया। महापाप से बच गया। यदि मुझे यह रोश्नी न मिलती तो कपटी, चोर, जवारी और ठग ही रहता, यदि अब भी समाज से दूर हो जाऊं, पुस्तकें पढ़ने को न मिलें, सत्संग न मिलें, तो वही बन जाऊंगा जो पहले था।

मैं खूब शराबी कबाबी था, अब बच्चों को नशों से बचने की प्रेरणा देता हूं। यह मेरे लिए कभी भी सम्भव नहीं था। गुरु महाराज जी का सेवक बने रहने की लालसा वा इच्छा ने मुझे अंडे के बिलों तक पर साईन करने से, ऐसी चीज़ें लाने से रोका, कितना बड़ा परिवर्तन!

शराब, सिगरेट की लत ने अब तक मेरा ऐसा हाल किया होता कि शायद अब तक मैं जिंदा ही न होता, अब तक पूरी तरह गरक गया होता, गुरु महाराज के देव असरों ने बचा लियां कुछ हानि परिशोध करने का बल दिया, नहीं तो अपनी ऐसी गतियां खराब नहीं लगती थी, परिशोध तो क्या करना था।

1988 में मैं श्रेणी में उन्नत होना चाहता था, परन्तु धीरे धीरे यह बोध हुआ कि मैं अंधेरे का जीव हूं। अपने की और दूसरों को महा हानि पहुचांने वाला हूं महा स्वार्थी, खोटे विचारों वाला हूं, मैं इस योग्य नहीं कि मेरा और मेरे परिवार का भला हो सके।

इस बार मैं सभा में पीछे बैठता रहा, कोई काम करने का उत्साह नहीं था। पहली ही सभा में गुरु महाराज के मानवता के लिए महा उत्पीड़न और दुख सुनकर कुछ दिल नम्र हुआ। यह समझ आई कि सचमुच गुरु महाराज के मिशन को मैंने अपना मिशन नहीं बनाया, परन्तु और ही अपनी नीच रुचियों की तृप्ति के लिए भाग दौड़ कर रहा हूं। गुरु की तरफ ध्यान कम है, दुनियावी पदार्थो की ओर ही भटकन बढ़ी है। काश! मेरे भीतर अपने भले की सेवाएं विकसित हो सकें। उच्च जीवनधारी कर्मचारियों से कुछ लाभ उठा सकूं।

सत्संग से दूर रहकर जीवन में बारीकी में तबदीली आनी शुरू हो गई। पहले से बढ़कर स्वार्थी बनने लगा हूं। सत्संग से दूर रहकर मेरा पूर्ण नाश होना आवश्यक है। अपना स्वार्थ बढ़ रहा अनुभव होता है।

उपकार तो क्या, प्रति उपकार भी नहीं करता। देवात्मा के देव प्रभाव पाने वाले कर्मचारियों की इच्छा पूरी न करके, उनके आदेश अनुसार न चलकर कष्ट पहुंचाने वाला बना हूं। स्वयं भी दुखों में फंसा हूं। उनको परेशान करने का अपराध किया है। देवात्मा गुरु की कैसी अज़मत है। जब पहली अपनी हालत सामने आती है कि शराबी कबाबी, बहन, भाईयों माता पिता को दुख देने वाला, पढ़ लिखकर भी उनकी कमाई कूंए में डाल दी पर कमाल वह मां, जिसने अपने माथे पर शिकन नहीं डाला, शराब पीकर ऐसी फरिश्तों जैसी मां को आप पड़ोस के सामने गंदा बोलकर अपमान किया, मैं कैसा नाशुकरा बेटा हूं। शराब पीकर पिता का अपमान किया। मैं सचमुच बहुत अपराधी हूं, मेरे ऐसे ऊपर से पालिश किए रूप को मेरा असली रूप पता नहीं लगता। घमंड इतना बढ़ गया है कि किसी को खातिर में नही लाता। नम्रता, हमदर्दी नहीं है। मैं और स्वार्थी, कोढ़ी और नीच बन रहा हूं। ऐसे सत्गुरु के दरबार में ही मैं बच सकता हूं।

अति उपकृत
एक सेवक

सूचना

धर्म जीवन सम्बंधी हर प्रकार की जानकारी के लिए, चंदा आदि भेजने , कोई मैटर आदि भेजने के लिए साथ लिखे पते पर सम्पर्क करें या लिखें। :-

श्रीमान बलदेव सिंह जी,
House No. 3154, Sector 21-D,
Chandigarh - 160 022
Phone : 0172 - 2716914

भजन

कृपा के सिंधु भगवान, मोहे आप ने बचाया,
मृत्यु की राह से मोड़ा, जीवन का पथ दिखाया।

पापों की जल रही थी, ज्वाला जो ज़िन्दगी में,
बरसा के अबरे रहमत, उस आग को बुझाया।

नित नीच काम करके करता था नाश अपना,
इस नाश की गति से, है आप ने हटाया।

मिथ्या मतों में फंसकर, मारी गई थी बुद्धि
कहता था पाप करके, 'तू बख्शदे खुदाया'।

गर इस तरह की हालत कुछ काल और रहती,
लुट जाता वह भी जल्दी, जो था अभी बकाया।

पर सत्य धर्म की ज्योति, जो आप से मिली है,
जिस्मों दिमाग दिल की, पलटी है उसने काया।

चिंता बुरी भी अब तो, देती है दुख मुझको,
और बद कलामियों को, है ज़हर सा दिखाया।

अब उच्च बोध पाऊं, हित अपना करना चाहूं,
महिमा तुम्हारी गाऊं, है आपने जगाया।

पर हित से लौ जो लागी, पर हानि मैंने त्यागी,
ग़फलत की नींद भागी, तम का हुआ सफ़ाया।

पहले के पाप धोकर, करता हूं दिल पवित्र,
परिशोध तत्व हितकर, है आपने बताया।

देता हूं दिल की तह से, धन्यवाद ऐसा कहकर,
है आप ने जगाया, है आप ने बचाया।

धर्म का मार्ग क्या है?

धर्म और अधर्म सम्बन्धी जब दो रास्ते वर्तमान हैं और दोनों के फल आत्मा के लिए एक नहीं, किन्तु जुदा जुदा हैं अर्थात् धर्म के फल जीवन प्रद, कल्याणकारी और उच्च सुखकारी और अधर्म के फल जीवन विनाशक और हानिकारक और अंत में दुखदाई हैं, तो फिर जिसे सत्य धर्म विषयक ज्योति मिली हो, उसके लिए यह आवश्यक हो जाता है, कि वह धर्म पथ के ग्रहण करने में वृथा अविश्वास और सांसारिक पदार्थो के लालच और भय में पड़कर धर्म को परित्याग न करें, किन्तु दृढ़ और अटल विश्वास रखकर केवल धर्म का साथ दे, और फिर उस को खुद अपने ही तजरुबे से मालूम हो जाएगा, कि धर्म का साथ देने से धर्म भी उनका साथ देता है, और यह वचन है कि "धर्मो रक्षति धार्म्मिकम्" सर्वदा प्रत्येक देश और प्रत्येक स्थान और प्रत्येक मनुष्य के लिए सत्य प्रमाणित होता है।

हाल में एक दस वर्ष का लड़का हैज़े से मर गया है। कहा जाता है कि वह बीमार होने से आठ दस दिन पहले से कई दिन की बासी और बिगड़ी हुई पंजीरी और मैदे के बासी और खराब लड्डू खाता रहता था। इन बासी और खराब चीज़ों के लगातार खाने और बहुत खा जाने से उसके पेट को सख़्त हानि पहुंची। हैज़े के जीवाणु उत्पन्न हुए, और इन विनाशकारी जीवाणुओं ने उस बालक के जीते जागते शरीर का थोड़ी सी देर में खातमा कर दिया। बच्चा मीठे के लालच में अपनी ज़बान को बेशक तृप्ति देता रहा, परन्तु उसके द्वारा अपने जीवंत शरीर का नाश कर बैठा। एक एक मक्खी शहद के लालच में जब उसके खाने के लिए किसी शहद का बर्तन पर जा बैठती है तो वह मूर्ख उस में फंसकर और उड़ने की योग्यता खोकर और फिर तड़प तड़प कर मृत्यु को प्राप्त हो जाती है। मनुष्यात्मा भी जब जीवन विषयक तत्व ज्ञान से अंधा होकर और वासनाओं की तृप्ति क लालच में फंसकर उन में से किसी के भी अधीन हो जाता है, तो उसके आत्मा का भी यही हाल होता है। धन अथवा नाम और इज़्जत आदि के लालच में फंसकर लाखों आत्मा विनष्ट होते हैं। एक एक धन का लालची धन की तृष्णा को इस कदर बढ़ा लेता है, कि उस पर अपना अधिकार रखने और उसका स्वामी बने रहने के स्थान में उल्टा उसे अपने ऊपर अधिकार देकर उसी का दास बन जाता है और फिर दास बनकर हर रोज़ उसी की सेवा में अपने आत्मा और शरीर को अर्पण कर देता है। और जिस प्रकार एक बहुत बड़ा शराबी नशे का दास होकर लगातार उसी को चाहता है और उस के नशे में मस्त रहता है, उसी प्रकार यह धन का नशई भी उसी चिंता और उसी के ही कार्य में, जहां तक सम्भव हो, लिप्त रहना चाहता है। परन्तु इस सब का फल क्या होता है? उसका आत्मा जीवन दायक तत्व लक्ष्य, उच्च संगत, उच्च चिंता और उच्च विचार आदि से वंचित रहकर धीरे धीरे अपनी जीवन प्रद शक्ति को खो जाता है, और उसके आत्मा में नीचता के

जीवाणु उत्पन्न होकर उसके जीवन को पूंजी को की खोते चले जाते हैं और जिस प्रकार क्षयी रोग से धीरे धीरे शरीर की अथवा घुन के खाते रहने से लकड़ी की अवस्था हो जाती है, उसी प्रकार उसका आत्मा धन अथवा किसी और वासना वा उत्तेजना के अधिकार में रहकर धीरे धीरे नष्ट होता चला जाता है। देव समाज में आकर यदि महा दुर्लभ और अमूल्य ज्ञान ज्योति के द्वारा किसी आत्मा के आन्तकि नेत्र न खुलें, और वह विनाश के विश्वव्यापी नियम के देखने और पहचानने और उस से मोक्ष लाभ करने की आकांक्षा के लाभ करने के योग्य न बनें, तो उस से बढ़कर और अभागा कौन हो सकता है? सचमुच अमृत सरोवर के निकट रहकर जो जन केवल विष खाता रहता है, और अमृत को न पहचानकर विष का ही लालची बनता हो, वह यदि महा अभागा और अंधा नहीं, तो और कौन हो सकता है?

लेख उपदेश खण्ड – 3

अक्ल पर पड़ा पत्थर

अक्षरधाम और रघुनाथ मन्दिर पर आतंकवादी हमले के बाद अब तो हमारी आंखे खुल जानी चाहिए और हमें समझदारी की ओर कदम बढ़ाना चाहिए। आंखे तो हमारी तब भी खुल जानी चाहिए थीं जब मुहम्मद गजनबी ने सोमनाथ मन्दिर पर हमला कर उसे तहसनहस कर दिया था और हमारे पुजारी हाथ पर हाथ बांधे अपने अराध्य देव द्वारा किसी अनहोनी का इंतजार कर रहे थे जोकि नहीं हुई। हमारे सामने इतिहास का वह पन्ना भी खुल जाना चाहिए जिस में लिखा है कि औरंगजेब ने हिंदुओं के मन्दिर तुड़वा कर भगवानों की टूटी हुई मूर्तियों के ऊपर से हिन्दुओं को चलने का हुक्म दिया था।

हमारी अक्ल तब भी ठिकाने पर आ जानी चाहिए थी जब हम ने अखबारों में पढ़ा कि मन्दिर के पुजारियों ने शासन से हथियारों की मांग की, जिन्दगी भर भगवान के सामने घंटीयां हिलाते रहे। अब जा कर उन्हें पता चला कि इन से आत्मरक्षा नहीं हो सकती। इसीलिए अपनी जिन्दगी बचाने के लिए हथियार मांग रहें हैं। भगवान के नाम पर तालियां पीटते रहने के बजाय अगर वे कराटे या कोई और मार्शल आर्ट सीखने जाते तो काम आता।

पता नहीं हमें आदमियों से ज्यादा पत्थरों में श्रद्धा क्यों है? पिछले 10 सालों से मन्दिरों के निर्माण की महामारी फैलती ही जा रही है। और यह भी मानना होगा कि इसके साथ हिंसा की घटनाएं भी बढ़ी हैं। शायद यही मन्दिरों की सीख हो। एक ही भगवान के एक ही शहर में कई मन्दिर होते हैं और सभी एक से बढ़ कर एक। कई प्रसिद्ध मन्दिर दानदाता के नाम पर होते हैं। कानपुर का जेके मन्दिर किस भगवान का है ये बहुत कम लोग जानते हैं। बिड़ला मन्दिर भी किस भगवान का है यह उसके पुजारियों के इलावा कितने लोग जानते हैं।

किसी गरीब के नाम मन्दिर रखा है कभी किसी ने? बरसों से भक्त इन मन्दिरों पर अपनी मेहनत की कमाई उड़ेलते आ रहे हैं। इस उम्मीद में कि इस से उन का भला होगा। भला होता जरूर है पर उन का नहीं बल्कि मंदिर के पुजारियों और मालिकों का।

बड़ी धूमधाम से मूर्ति की स्थापना होती हैं पंडे लोग न समझ में आने वाली भाषा संस्कृत में कुछ बुदबुदाते हैं या चिल्लाते हैं। जाने किन किन तथाकथित पवित्र नदियों के पानी, दूध, केसर और शहद से मूर्ति को नहलाते हैं। चंदन का लेप करते हैं और इस काम में घंटों बरबाद करते हैं धर्मपरायण जनता हाथ जोड़े देखती रहती है। वह समझती है कि इस पावन घड़ी में वहां उपस्थित हो कर वह पुण्य का काम कर रहा है। वह पंडों की इस बात पर विश्वास कर लेती है कि उन के मंत्रोच्चारण से उस पत्थर में अदृश्य शक्ति आ गई है।

होम्योपैथी की भाषा में कहें तो वह पत्थर पोटेंटाइज हो गया। इस के बावजूद उन मूर्तियों को आदमी के डर से पहरे में रखा जाता है। चूंकि आतंकवादियों ने मन्दिरों को अपवित्र कर दिया था इसलिए इंसान ने दुनिया भर को पवित्र करने वाले भगवान की मूर्ति को पवित्र किया। पतितपावन भगवान की यह कैसी मजबूरी!

अब मन्दिर के पुजारी मांग कर रहें हैं कि उन्हें भगवान की रक्षा के लिए हथियार दिए जाएं। अरे, जो सारे विश्व का रखवाला है उसकी रक्षा की नौबत क्यों आन पड़ी। और जब पुजारी खुद इतने दिनों से भगवान की पूजा प्रार्थना कर रहें हैं तो फिर उन हें किस बात का भय? उन का आया संकट तो भगवान ही हर लेगा। पर उन्हें अब हथियार ही भगवान लग रहे हैं। जब अक्षरधाम और रघुनाथ मन्दिरों पर हमले हुए थे तब भक्त तो 'हे भगवान रक्षा कर' की गुहार लगा रहे होंगे पर मन्दिर में बैठा उनका भगवान 'हे भक्त रक्षा कर' का आर्तनाद भी कर रहा होगा।

दरअसल, मन्दिर हमारी श्रद्धा के कम और अंधश्रद्धा के केन्द्र ज्यादा हैं, ये जनता के कल्याण के लिए नहीं हैं, मुम्बई के दादर मध्य रेलवे स्टेशन के बाहर अति धनवानों के देवता का एक आलीशान मन्दिर है। जिस के नजदीक ही इलाके से बाहर जाने वाली बसें ठहरती हैं और सवारियां लेती हैं धूप या बारिश से परेशान जब कोई यात्री इस मन्दिर में पनाह लेना चाहता है तो पुजारी उसे भगा देता है, जैसे वह कोई कुत्ता हो। जनजन की सेवा का संदेश देने वाले भगवान के मंदिर के पुजारी में इतनी भी इनसानियत नहीं है कि वह थकेहारे लोगों को बैठने दें।

इस मंदिर की जगह अगर छायादार प्रतीक्षालय बना दिया जाता तो न जाने कितनों का भला होता और यात्रियों के मुंह से प्रतीक्षालय बनाने वाले के प्रति आदर के दो शब्द जरूर ही निकलते। ऐसे धनी मन्दिरों के पुजारी गद्दी के लिए आपस में झगड़ते रहते हैं। कई बार तो हत्याएं भी कर बैठते हैं। जब भगवान इन को सद्बुद्धि नहीं दे सकता तो फिर आम जन को क्या देगा?

अब तो जनता की समझ में आ जाना चाहिए कि मंदिर में स्थापित वह मूर्ति सहज एक तराशा हुआ पत्थर है। उस में कोई शक्ति नहीं है। कई हैक्टेयर की सरकारी जमीन पर बने ये मंदिर समाज पर बोझ है। क्या इन की जगह अस्पताल नहीं बनाया जा सकता? क्या कोई कारखाना नहीं डाला जा सकता जो लोगों में कर्म की भावना जगाए। क्या इन की जगह स्कूल नहीं बनाया जा सकता? मंदिरों की ओट ले कर पुजारियों द्वारा कितने पाप किए जाते हैं। यह किसी से छिपा नहीं है।

इस के बावजूद हर साल नए नए मंदिर बन रहे हैं और आगे भी बनेंगे।

(सरिता के साभार)

पिता की भूल

साधारणत: माता पिता जितना स्नेह और कुर्बानी बच्चों के लिए करते हैं कोई नहीं करता, इसमें थोड़ा सा भी संदेह नहीं, इस गहराई को माता पिता बनकर ही कोई माप सकता है। माता पिता संतान का रिश्ता बन तो जाता है, परन्तु उसके लिए माता पिता के लिए कोई ऐसे Training Centre नहीं, जहां उन्हें बच्चों के मनोविज्ञान को बारीकी से समझाया जाए। इसका परिणाम अकसर हम देखते हैं कि या तो माता पिता जरूरत से अधिक बच्चों को लाड प्यार करके बिगाड़ लेते हैं या अधिक सख्ती करते हैं। विशेषकर छोटे बच्चों की तो दुनियां ही माता पिता होते हैं, उनकी ओर से जरूरत से अधिक सख्ती उन्हें नन्हें दिल को हिला देती है। उनके किसी गल्ती पर जब माता पिता डांटते हैं, तो भी उन्हें कुछ समझ नहीं आता है, परन्तु अकसर माता पिता अपने कामों में उलझे हुए, अपनी परेशानियों से परेशान अपना गुस्सा बच्चों पर निकालते हैं और बच्चे सहम जाते हैं। वह उसका कारण समझने में भी असमर्थ्य होते हैं। ऐसे ही एक पिता का पत्र नीचे दिया जा रहा है, जिसने अपने सोए हुए बेटे के मासूम चेहरे को देखा और उसे अपनी भूलों का एहसास हुआ कि किस प्रकार असमय उसने अपने नन्हें बेटे को डांटा, उस पर चिल्लाया, उस पश्चाताप में उन्होंने बेटे के नाम कुछ शब्द लिखे, जो नीचे दिए जा रहें हैं

"सुनो बेटा! मैं तुमसे कह रहा हूं जब तुम पड़े हो एक नन्हा सा हाथ अपने गाल के नीचे रखे हुए और पीछे माथे पर भूरी भीगी लटें चिपकाएं हुए। मैं चुपके से अकेला ही तुम्हारे कमरे में चला आया हूं। कुछ मिनट पहले ही जब मैं अपने पुस्तकालय में अपने पेपर को पढ़ रहा था एक पश्चाताप की लहर सी मेरे भीतर उठी। अपराधी सा मैं तुम्हारे पास चला आया।

मैं ये बातें सोच रहा था, बेटे! मैं तुम पर बिगड़ा था। मैंने तुम्हें डांटा जब तुम स्कूल जाने के लिए तैयार हो रहे थे क्योंकि तुमने तौलिए से केवल मुंह ही पोंछा मैंने जूते साफ न करने के लिए तुम्हारी मरम्मत की। मैं क्रोध में चिल्लाया जब तुमने कुछ अपनी वस्तुएं फर्श पर पटकी।

नाश्ते के समय भी मैं नुक्स निकालता रहा। तुमने चीज़े गिराई। तुमने खाना जल्दी से निगला। तुम मेज पर कुहनियां रख कर बैठे हो। तुम ब्रैड पर मक्खन की बहुत मोटी परत लगाते हो और जब तुम खेलने के लिए जाने लगे, तुम मुड़े और हाथ हिला कर बोले "Good bye Daddy" और मैं त्योरी चढ़ा कर बोला अपने कंधों को सीधा रखो।"

यह सब दोपहर बाद फिर शुरू हो गया। जब मैं सड़क पर आया तो तुम्हें अपने घुटनों के बल कंचों से खेलते हुए देखकर चिढ़ गया। जुराबों में सुराख थे। मैंने तुम्हें तुम्हारे दोस्तों के सामने अपने आगे आगे घर की और लाकर शर्मिंदा किया और कहा- जुराबें महंगी है - अगर तुम्हें खरीदनी पड़ें तो तुम अधिक ध्यान रखोगे। कल्पना करो यह एक पिता अपने बेटे से कह रहा है।

क्या तुम्हें याद है? बाद में जब मैं पुस्तकालय में पढ़ रहा था तब तुम डरे हुए से आंखों में घायल सा भाव लिए आए। मैंने पेपर से नज़र उठा कर इस व्यवधान से अधीर होकर जब देखा तुम दरवाजे पर ही सहम गए।

"तुम्हें क्या चाहिए? मैं चिल्लाया।"

तुम कुछ न बोले लेकिन एक तेज छलांग लगा कर अपनी बाहें मेरे गले में डाल कर चूम लिया और प्यार से तुम्हारी छोटी छोटी बाहें और कस गई। प्यार जो

तुम्हारे मन में उमड़ रहा था और मेरी उपेक्षा से भी कम न हुआ था। फिर तुम चले गए।

हां बेटे! उसके थोड़े ही समय बाद पेपर मेरे हाथों से फिसल गया। और मेरे मन में तीव्र भय आ गया। अभ्यास ने मेरा क्या हाल बना दिया है। दोष देखने की आदत, झिड़कने की आदत। यह मेरी ओर से बेटे को इनाम था। यह बात नहीं कि मैं तुम्हें प्यार नहीं करता था, यह तो इसलिए था कि में बच्चों से बहुत अधिक अपेक्षा रखता था। मैं तुम्हें अपनी आयु के मापदंड से मापता रहा।

तुम्हारे भीतर बहुत कुछ अच्छाई थी, सच्चाई थी सुन्दरता थी। तुम्हारा छोटा सा दिल बड़ी पहाड़ी के ऊपर के उषाकाल की तरह बड़ा था। यह तुम्हारे भागकर मेरे पास आने और मुझे चूम Good Night करने से दिखाई देता है। आज और किसी बात का महत्व नहीं बेटे। मैं अंधेरे में तुम्हारे बिस्तर के पास आया हूं और झुका हूं। शर्मिंदा होकर।

यह थोड़ा सा परिशोध है अगर मैं तुम्हें जागते हुए बताऊं तो तुम नहीं समझ सकोगे इन बातों को लेकिन कल मैं सचमुच में वास्तविक पिता हूंगा, मैं तुम्होर साथ लाड प्यार करूंगा, तुम दु:खी होंगे तो दुखी हूंगा। तुम हंसोगे तो हसूंगा। जब कोई अधीरता का शब्द मुंह से निकलने लगेगा तो मैं अपनी जबान को काट दूंगा। मैं यह जप करता रहूंगा यह छोटा सा बच्चा है, छोटा या बच्चा है।"

मुझे डर है कि मैंने तुम्हें आदमी समझ लिया है। लेकिन अब जब मैं तुम्हें अपने बिस्तर में सिकुड़ा सा देख रहा हूं। तो देख रहा हूं कि तुम अभी भी एक शिशु हो। कल तुम अपनी मां की बांहों में थे, उसके कंधे पर सिर रखे हुए। मैंने तुमसे बहुत अधिक चाहा, बहुत अधिक चाहा।

प्रेरणात्मक प्रसंग

विचार शक्ति व्यक्तित्व को निखार देती है

उत्कृष्ट विचार व्यक्ति को उन्नति के शिखर पर ले जाते हैं। पुस्तकें पढ़ने से विचार परिपक्व होते हैं। सत्संग से विचारों में दृढ़ता आती है। विचारों के प्रभाव से व्यक्तित्व का समग्र विकास होता है। संसार में जितने महापुरुष हुए हैं, विचारों की ऊर्जा से उनकी महानता प्रकट हुई है। सुविचारों से मन विनम्र और जीवन पवित्र होता है। विचारों की शक्ति शब्दों की अभिव्यक्ति को निखार देती है।

ज्ञान का हर पहलू कल्याणकारी विचारों से ओतप्रोत है। विचार जब आत्मनिर्भर करते हैं तो जीवन फूलों की मानिंद सुरभित हो उठता है। आत्मविकास की यात्रा उत्तम विचारों से शुरू होती है। श्रद्धा, विश्वास, प्रेम, समता तथा समानता जैसे मार्मिक गुण पावन विचारों से पल्लवित होते हैं। विचारों की कसौटी पर व्यक्तित्व की परख होती है। अच्छे विचार सद्‌गुणों का पोषण करते हैं। मानव जीवन के निर्माण में विचारों की गरिमा होती है। जीवन संग्राम में दृढ़ विचार एक ढाल बन जाती है, तो सफलता के पथ प्रशस्त हो जाते हैं। विचारों का उजाला जब जीवन की राहों में बिखरता है तो मंजिल का शिखर साफ दिखाई देता है। वार्तालाप की प्रभुता को विचार प्रकट करते हैं। विचारवान व्यक्ति अहिंसक और धैर्यवान होता है। बाधाएं उसके पथ से हटने को विवश हो जाती है। विचारों के मोतियों की आभा से जीवन में आशा का संचार होता है। अत: अपने विचारों की धरोहर को सहेजकर रखें अपनी विचार श्रृंखला को कलुषित कदापि न होने दें। सुन्दर विचारों की थाती जब आती है तो जीवन की बगिया को महकाती है। जो विचार करने के

पश्चात पथ में पग धरता है वह ठोकर की संभावना को टाल देता है। विचारशील व्यक्ति बोलने से पहले परिणाम पर दृष्टिपात करता है। सुविचारों की उत्पत्ति मानव की साधना में सहायक सिद्ध होती है। जो लोग विचारों को वास्तविक रूप में ग्रहण करते हैं वे सांसारिकता की भूलभूलैया से अपनी सुरक्षा कर लेते हैं। विचारों से व्यक्ति के जीवनचरित्र का मूल्यांकन होता है। निखरे विचार व्यक्ति को विद्वानों की श्रेणी में लाते हैं। विचारों की गरिमा हमारे चरित्र का दर्पण हैं। इस तथ्य के मद्देनजर हमें अपने विचारों की कद्र करनी चाहिए। सुविचारों की उपलब्धि के लिए ज्ञानी-जनों के सम्पर्क में आएं। अध्ययन से विचारों के आदान-प्रदान में एक नई शैली का सूत्रपात होता है।

मूल्यों की होली निरंतर जल रही है

बहुत उदास है मन! कुछ समझ में नहीं आता, यह सब क्या हो रहा है? क्यों हो रहा है। इस जमीन पर रहने वाले जो रच रहे हैं वह न केवल बेहद त्रासद है, बल्कि भयानक भी है। मानवीय मूल्यों की होली यहां हर क्षण जलाई गई है जिसकी लटों ने इस नई सदी के आसमान को विषाक्त और दमघोंटू धुंए में स्याह कर दिया है। मनुष्य का चेहरा इस कदर क्रूर हो गया है कि पहचाना नहीं जाता।

यह कैसी विडंबना है कि इसके चलते ऐसा लगने लगा है कि हम एक नई उजली सदी के शुरुआती दौर में नहीं, बल्कि पाषाण युग के जंगल में जी रहे हैं। बस उठा लीजिए थोड़े से अखबार, सामूहिक नरसंहार, वहशी बलात्कार और जिंदा जला दिए जाने की घटनाओं की खबरों से लथपथ हैं। इन दिनों की सुबहों का तो यह आलम है कि अखबार उठाने से भी डर लगता है कि कहीं इन मनहूस खबरों के खून से हमारे हाथ गीले न हो जाएं। सुबह का सूरज देखने की हिम्मत नहीं होती, कहीं वह भी खून से लथपथ न हो।

बहरहाल, सवाल यह है कि मानवीय मूल्यों के विघटन के इस भयावह समय में संवेदनशील लोगों का क्या दायित्व है? कहने वाले यह भी कह सकते हैं कि यह सोचने से भी क्या होगा? क्या मानवीय मूल्यों का विघटन रुक जाएगा? आदमखोर शेर और निरीह बकरी क्या एक घाट पर पानी पीने लग जाएंगे? क्या वीरप्पनन के कैसेट अब मिमियाहट भरे आने लगेंगे? एक हद तक यह बात सही भी है, लेकिन यह पूर्ण सत्य नहीं, बल्कि अर्धसत्य है। सच तो यह है कि अपने स्तर पर हर गलत चीज, हर गलत बात का विरोध करना सभी का दायित्व है। फिर जागरूक व सृजनशील लोगों की भूमिका तो ज्यादा अहम है।

हमारी कलाओं पर आज चारों ओर से हमले हो रहें हैं। हम ऐसी पगलाए दौर में जी रहें हैं जहां कम्पयूटर के आंकड़ों ने हमारी संवेदना के भावुक शब्दों को चबाकर रक्तरंजित कर दिया है। विज्ञान की प्रगति के आंकड़े भले ही आसमान छू रहें हों, पर हमने हमारी आंखों के सपने छीनने में कोई कसर नहीं छोड़ी है।

आज भी लिखे, छपे शब्द का बेहद असर होता है। इसके कई प्रमाण मौजूद हैं। किसी प्रेरक कविता को सुनकर/पढ़कर आत्महत्या को प्रेरित लोग जीवन की ओर लौटे हैं। अत: सूरज की तरह इस शाश्वत सत्य के मद्देनजर लेखकों व स्वतंत्र चेताओं का सबसे पहला और अहम दायित्व यही है, कि सच को सच कहें और झूठ को झूठ। विघटन के विरुद्ध आज के दौर में यह दायित्व ही नहीं, बल्कि धर्म भी है। दुख इस बात का भी है कि एक जमात झूठ को सच कहने की कोशिश करती नज़र आती है। यह जमात सींग मारकर अंतत: खूंटे से बंधकर आत्ममुग्ध हो रही है। उनसे तो यही कहा जा सकता है कि - 'सच को सच नहीं कह सकते तो बेहतर है चुप रहिए/पर अमावस को पूर्णिमा तो मत कहिए।'

चिंतन को कर्म से जोड़कर देखिए

चिंतन और कर्म यदि विपरीत दिशा में होंगे तो

Regd. Postal No.Pb (0050) 2003
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

अवश्य ही परिणाम अच्छे नहीं आएंगे। परिणाम अच्छे न आने पर खुद में तो निराशा और तनाव आता ही है, दूसरों के जरिये निंदा या आलोचना भी होती है। ऐसी स्थिति में जो आत्मनिग्रही बनकर सोचना शुरू कर देता है, उसकी स्थिति सुधर जाती है। जो इंसान अपनी आलोचना सुनता और खुद करता है, वह उतनी ही महान बनता चला जाता है। अंतर की आवाज को सुनकर उस पर अमल करने वाले, बुद्धि और विवेक का इस्तेमाल संतुलित ढंग से करने वाले और विचारशक्ति का भरपूर उपयोग करने वाले इंसान की जिंदगी सुख, शांति और विकास के रास्ते पर बढ़ती जाती है। प्रसिद्ध फांसीसी विचारक बर्गसां के मुताबिक बुद्धि और सहज ज्ञान को कार्य में उतारने वाले व्यक्ति में असहजता नहीं आती। असहजता विपरीत दिशा की ओर ले जाने वाली प्रवृति है। दूसरों की घटिया आलोचना, कटुव्यवहार, दोषपूर्ण निर्णय, अहंकार, आत्म प्रवचना, स्वार्थ को ही सर्वोपरि समझना, दूसरों की अपेक्षा को अधिक तूल देना तथा सत्य को झूठ और झूठ को सत्य बताने में परहेज न करना, ये आदतें खुद के लिए खतरा बनती ही हैं, समाज को भी नुकसान पहुंचाती हैं।

भर्तृहरि ने चार तरह के इंसान बताएं हैं। उत्तम कोटि के इंसान वे हैं जो दूसरों के हितों के लिए अपने हितों को छोड़ देते हैं। ऐसे को देवपुरुष कहा जाता है। जो अपने हितों के लिए दूसरों के हितों की अनेदखी नहीं करते, ऐसे को मनुष्य कहा जाता है। अपने हित के लिए जो दूसरों का अहित करना ही ठीक रास्ता मानते हैं, उन्हें राक्षस या दानव माना जाता है। बिना किसी वजह से केवल मानसिक आनंद के लिए दूसरों का अहित करना ही जिनका कर्म है, ऐसे दानव, पतित के लिए भर्तृहरि की नजर में कोई शब्द ही नहीं है। इन चारों तरह के लोगों में हमारा स्तर कौन सा होना चाहिए, इस पर चिंतन मनन जरूर करते रहना चाहिए। मनुष्य से देवपुरुष बनने की आकांक्षा सदैव करते रहना चाहिए। यही वह रास्ता है जिस पर बेखौफ होकर बढ़ा जा सकता हैं पाश्चात्य और भारतीय (पूर्व) विचारकों ने विचार करके ही कर्म करने के लिए सलाह दी है। भावुक, अंधानुकरण, अंधविश्वास, पाखंड या कुरीतियों में फंसकर खुद के लिए खतरा न बनें।

यह तभी संभव है, जब हमारे नजरिये में धार्मिकता, भौतिकता और नैतिकता का संतुलन हो। इसके लिए हमें विचार शक्ति को बल देते रहना चाहिए। महानता या सुधार शक्ति के लिए सकारात्मक सोच और कार्यशक्ति को बढ़ाते रहिए। यही वह सहज रास्ता है, जहां किसी तरह का संकट अशुभ परिणाम नहीं देता है। इस बात पर हमेशा जरूर सोचते रहिए कि जिस विचार या कार्य को हम व्यक्तित्व विकास के लिए वरदान समझ रहें हैं, कहीं वह विपरीत परिणाम तो नहीं देगा? जाहिर है जो खुद के लिए खतरा बन जाता है, वह दूसरों के लिए हितकारी नहीं बन सकता।

भास्कर से साभार

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए। (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन। प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर म. नं. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

सम्पादक डा॰ विनोद खेड़ा